स्वामिने ते नमो नमः

डॉ. नारायण शास्त्री काङ्कर

श्रीमान् महेश्वरानन्द, सदाचार प्रचारक।
नमस्तेऽस्तु महाभाग, विश्वगुरो दयाम्बुधे ।।1 ।।

हे दयासागर, सदाचार के प्रचारक, विश्वगुरु, श्रीमान् महेश्वरानन्द जी महाराज! आपको नमन हो।

देशि-विदेशि-शिष्येभ्यो, दातुं सद्-वृत्त-शिक्षणम्।
नित्यशं पर्यटते स्वपामिन्!, नमस्तेऽस्तु पुनः पुनः ।।2 ।।

देशी-विदेशी शिष्यों को सदाचार की शिक्षा देने के लिये नित्य पर्यटन करते रहने वाले आपको हे स्वामी जी महाराज! पुनः पुनः नमन हो।

सुख-शान्ती कथं लभ्येः, ज्ञातुमेतदनारतम्।
चिन्तित-सर्व-लोकाय, त्वमेव मार्ग-दर्शकः ।।3 ।।

सुख शान्ति कैसे प्राप्त की जाय? इस बात को जानने के लिये सतत चिन्तित रहने वाले सभी लोगों को मार्ग-दर्शन कराने वाले आप ही हो।

ये भौतिक-पदार्थेषु, सुख-शान्ती प्रपश्यतः।
तत्र ते प्रयतन्तोऽपि, प्राप्नुवन्ति स्थिरेन ते ।।4 ।।

सुख शान्ति को जो व्यक्ति भौतिक पदार्थों में देखते हैं- वे उनमें प्रयत्न करते हुए भी उन्हें नहीं पाते हैं।

यदा स्वयं स्थिरा नैव, पदार्था भौतिका अभी।
सुख-शान्ती कथं दद्युः, स्थिरे ते सर्ववाञ्छिते ।।5 ।।

जब वे भौतिक पदार्थ स्वयं ही स्थिर नहीं है- तब वे सभी के द्वारा वाञ्छित स्थिर सुख शान्ति कैसे दें?

सुख-शान्ती स्वयं ते हि, निघ्नन्ति स्वापकर्मभिः।
किमातङ्कं प्रसार्यामी, सुख-शान्तयोर्न नाशकाः ।।6 ।।

सुख-शान्ति को तो वे व्यक्ति अपने अपकर्मों से स्वयं ही नष्ट करते हैं। क्या आतङ्क प्रसारित करके वे सुख-शान्ति को नष्ट करने वाले नहीं हैं?

मनः प्रदूषणादेव, सर्वेऽनर्था भवन्ति हि।
तेऽनर्था एव निघ्नन्ति, सुख-शान्ती सदा नृपाम् ।।7 ।।

लोगों के मन के प्रदूषित हो जाने से ही सभी अनर्थ उत्पण्न होते हैं और वे अनर्थ ही सुख-शान्ति को सदा नष्ट करते हैं।

दिव्या संस्कृत-भाषैव, मनः शोधयते नृणाम्।
अनर्थान् नैव कुर्वन्ति, येषां शुद्धं मनः सदा ।।8।।

दिव्य संस्कृत भाषा ही लोगों के मन को शुद्ध करती है जिनका मन सदा शुद्ध रहता है- वे अनर्थ नहीं करते हैं।

नृभ्योऽनिवार्थ-रुपेण, देयं संस्कृत-शिक्षणम्।
येन मनो-विशुद्धिः स्याद्, अनर्थाश्च भवन्तु न ।।9।।

लोगों को अनिवार्य रूप से संस्कृत की शिक्षा देनी चाहिये जिससे मन की विशेषरुप से शुद्धि हो और अनर्थ न हो।

संस्कृतं शिक्षितं येन, तन्मनः स्यान्न दूषितम्।
पुनः स नैव कुर्णीत, निन्द्यं कर्म कदाचन ।।10।।

जिसने संस्कृत सीख ली उसका मन दूषित नहीं होता। फिर वह कभी निन्दनीय कर्म भी कभी नहीं करता।

सम्प्राप्त-संस्कृत-शिक्षः, शिष्टो भवति सोऽन्यत्रः।
सद्-वृत्तश्च पसुनर्नासौ, कस्मैचिदपि दुःखदः ।।11।।

संस्कृत की शिक्षा सम्यक् प्राप्त किया हुआ वह व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से विशिष्ट ही होता है। फिर सदाचारी बना हुआ वह किसी को दुःख देने वाला भी नहीं बनता।

असद्-वृत्तापराधेन, शिक्षित-संस्कृतो जनः।
दण्डितो न श्रुतः क्वापि, पठितो वाऽपि जातु न ।।12।।

दुराचार के अपराध के कारण संस्कृत सीखा हुआ व्यक्ति कहीं भी कभी दण्डित किया न सुना गया है और न पढ़ा ही गयी है।

स्वीय-शिष्येष्वपि श्रीमन्! देयं संस्कृत-शिक्षणम्।
येत ते पुण्य-कार्येऽस्मिन्, सम्मिल्य स्युर्यशास्विनः ।।13।।

हे श्रीमान् जी ! अपने शिष्यों को भी आपके द्वारा संस्कृत की शिक्षा दी जानी चाहिये-जिससे वे आपके इस पुण्यकार्य में सम्मिलित होकर यशस्वी बनें।

ममापि सहयोगोऽत्र लिप्स्यते चेदवाप्स्यते।
सर्वकल्याण-लग्नाय, स्वामिने ते नमो नमः ।।14।।

मेरा भी सहयोग इस कार्य में प्राप्त की जाने की इच्छा की जायेगी तो वह प्राप्त कर लिया जायेगा। सभी के कल्याण में संलग्न हे स्वामी जी महाराज! आपको नमन है, नमन है।

किमहं बहु निवेदयै, भणे भषते बहुविदे विश्व-गुरवे?।
यदुचितं प्रतीतं स्यात्, तदेव क्रियतां सर्व-जन-हिताय।।15।।

अजी! बहुत जानने वाले विश्वगुरु आपको मैं क्या बहुत निवेदन करूँ? जो उचित प्रतीत हो7 वही सर्वजन-हित के लिये किया जाय।

यदि मया निवेदितं, भवते किमपि यद्यप्रासङ्गिकम्।
क्षान्त्वा तत् कृपया मां, शास्तुमर्हति मार्गमुपदिशन्।।16।।

यदि मैंने यहाँ आपको जो कुछ भी अप्रास्ङ्गक निवेदन किया है तो आप उसे क्षमा करके मुझको कृपया मार्गोपदेश करते हुए शासित करें।

त्रुटिकरणं हि लघूनां, वर्त्तते स्वाभाविको गुणः।
तत्कृते क्षमा-दानं पुनरस्ति महतां प्राकृतिको गुणः।।17।।

त्रुटि करना निश्चित रुप से लघुजनों का स्वाभाविक गुण होता है और उसके लिये क्षमादान करना महापुरुषों का प्राकृतिक गुण है।

तदिदं विदतैव मया, निवेदितमिदं भवते निःसङ्कोचम्।
क्षमतां वा न क्षमतां, साम्प्रतमेतत् समस्तं भवदधीनम्।।18।।

यह जानते हुए मेरे द्वारा आपसे निःसंकोच यह निवेदन किया गया है। आप इसे क्षमा करें या न करें- अब यह सब आपके अधीन है।

पात्रत्वं विचार्यैव मया, प्रस्तूयते नित्यं स्वकीयो हार्दः।
भवति पूर्ण-पात्रताऽस्ति, तदिहं दृष्टैव प्रस्तुतोऽयं हार्दः।।19।।

पात्रता का विचार करके ही मेरे द्वारा सदा स्वकीय हार्दिक भाव प्रस्तुत किया गया है।

युग्मकम्

ऊनत्रिंशे कैसर-विहारे विद्या-वैभव-भवनेऽत्र।
जगत्पुरारव्य-जसपसुरे, वासी कोविद-कुल-किङ्करः।।20।।
एषोऽहमस्मि भवतः, सन्ततमेव कृपा-कणिकाकाङ्क्षी।
हार्दं स्वमुपसंहरन्, कश्चत नारायणकाङ्करः।।21।।

यहाँ विद्या-वैभव-भवन, 29, केसर-विहार, जगत्पुरा, जयपुर-302017 (राजस्थान) में निवास-कर्ता कोविद-कुल किङ्कर आपकी सतत ही कृपा-कणिका का आकाङ्क्षी यह मैं कोई अपने हार्दिक भाव को उपसंहृत करता हूँ।